# एक राष्ट्र : एक कानून

तीन तलाक को गैर कानूनी बताकर उच्चतम न्यायालय ने संवैधानिक अधिकारों और धर्म की आड़ में चलाई जा रही कुप्रथाओं के बीच एक स्पष्ट रेखा खींच दी है। अब इसे कानूनी जामा पहनाए जाने की आवश्यकता है कि अपनी आस्थाओं से पृथक हर हिन्दुस्तानी कानून के सामने समान है। अब समय आ गया है,जब हम संविधान के अनुच्छेद 44 में परिकल्पित समान आचार संहिता के सिद्धान्त को कानून बना दें।विवाह, उत्तराधिकार, तलाक एवं गोद लेने जैसे अनेक मुद्दे हैं, जिन पर हम आज भी अपने धर्मों के कानूनों का पालन करते आ रहे हैं। प्रत्येक समुदाय की अपनी प्रथाएं हैं। इनमें से अधिकांश कानून महिलाओं के लिए अहितकर हैं। हमने हिन्दू, पारसी और ईसाई प्रथाओं पर तो कानून बना दिए, परन्तु मुसलमानों की अनेक प्रथाएं अभी भी उनकी धार्मिक मान्यताओं के अनुसार ही चल रही हैं।

समान आचार संहिता को लागू करने में अनेक बाधाएं हैं। मसलन क्या यह प्रत्येक समुदाय के अपने कानूनों में से सर्वोत्कृष्ट भाग का चुनाव कर पाएगा? क्या यह सभी धर्मों के लिए निष्पक्ष सिद्ध होगा? क्या यह बहुसंख्यक हिन्दुओं का पक्षधर होगा? ऐसे अनेक प्रश्न हैं, जिन्होंने इस कानून की संवेदनशीलता को बहुत बढ़ा दिया है।इन प्रश्नों पर विचार करते हुए यह देखना आवश्यक है कि सन् 1950 में हिन्दू विधान को संहिताबद्ध कर दिया गया था। हांलाकि यह लिंग भेद से पूरी तरह स्वतंत्र नहीं है। इसी प्रकार ईसाईयों के भी अपने कानूनों को संहिताबद्ध कर दिया गया। मुस्लिम समुदाय ही ऐसा है, जिसकी समुदायगत प्रथाओं को कई मायने में संहिताबद्ध नहीं किया गया है। हांलाकि भारतीय कानून मुस्लिम महिलाओं के अधिकारों का विस्तार करने में सफल रहा है।

हमारे सिविल कानून में स्पेशल मैरिज एक्ट, घरेलू हिंसा कानून, बाल-अपराध कानून जैसे अनेक अधिनियम हैं, जिनका इस्तेमाल किसी भी समुदाय का व्यक्ति अपने समुदायगत कानूनों के अतिरिक्त भी कर सकता है। परन्तु अभी तक हमारे पास कोई सर्वग्राही पारिवारिक संहिता नहीं है।हमारे देश के अलग-अलग समुदायों में एक ही प्रथा या विषय पर

अलग-अलग नजरिए हैं। यहाँ तक कि हिन्दू संहिताबद्ध कानून भी समान नहीं है। इसमें स्थानीय प्रथाएं भी मान्य समझी जाती हैं। भारत जैसे विशाल देश में इतनी प्रथाओं का अध्ययन एवं समन्वयन करके एक समान संहिता बनाना जटिल कार्य है। इन सबके बीच ऐसा अवश्य किया जा सकता है कि किसी भी धर्म में महिलाओं को उनके अधिकारों से वंचित न किया जाए।

भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में धार्मिक स्वतंत्रता के अस्तित्व के साथ समानता एवं भेदभाव को दूर करने की भावना भी छिपी हुई है। इसके चलते समान आचार संहिता ऐसी होनी चाहिए, जो अपने राष्ट्र के वैविध्य को समायोजित करती हुई प्रतीत हो।इसके लिए हमें पश्चिमी प्रजातांत्रिक देशों का भी अध्ययन करना होगा। देखना होगा कि उन्होंने अपने बहुसंख्यकों एवं अल्पसंख्यकों के अधिकारों के बीच कैसे संतुलन बनाते हुए एक उदार पारिवारिक कानून की स्थापना की है। इस मामले में अमेरिका, ब्रिटेन से लेकर टर्की और इंडोनेशिया की व्यवस्था देखनी-समझनी होगी।

एक बात प्रमाणित है कि किसी भी देश का कानून उसके सामाजिक मानदंडों से परे नहीं जा सकता। समान आचार संहिता में भी हमारे सामाजिक आदर्शों का ध्यान रखते हुए, हमें यह भी तय करना होगा कि क्या इसे सभी धर्मों के लिए अनिवार्य बनाया जाए या देशवासियों को अपने धर्मों के कानूनों का अनुपालन करने दिया जाए।स्वतंत्रता के सात दशकों में किसी सरकार ने इस कानून को लाने का ईमानदार प्रयत्न नहीं किया। परन्तु भारतवासियों को अपने परिवार, धर्म, समुदाय एवं देश के प्रति सच्चा जीवन जीने के लिए समान आचार संहिता की नितान्त आवश्यकता है।

**'द टाइम्स ऑफ इंडिया' से साभार।**